© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 05 | May 2018

हिंदी साहित्य में दलित स्त्री विमर्श पर एक विवेचना

डॉ जागृति

चाणक्यपुरी, अहियापुर, पोस्ट- उमानगर, मुजफ्फरपुर |

सार

भारतीय भाषाओं में दलित स्त्री लेखन को रूपाकार लिए हुए दो दशक से ज्यादा गुजर चुके हैं। यह पूरा दौर दलित स्त्रीवादी कार्यकर्ताओं, रचनाकारों के लिए कठिन संघर्षों का रहा है। सामाजिक बदलाव की दिशा में काम करने वाले तमाम संगठनों, मंचों और समूहों तक अपनी बात पहुँचाने, उन बातों की गम्भीरता का अहसास कराने और उनकी कार्यसूची में मुमकिन हद तक अपने मुद्दों को जगह दिला सकने में उन्हें जटिल दिक्कतों का सामना करना पड़ा है। जाति-व्यवस्था के खिलाफ लड़ने वाले दलित संगठनों ने जहाँ इस मुहिम को थोडे शक की नज़र से देखते हुए दरकिनार करने की कोशिश की वहीं स्त्रीवादी संगठनों ने जाति और पितृसत्ता के गठजोड़ को तवज्जो देने लायक नहीं समझा। यह जुझारू दलित स्त्रियों और उनके समर्थकों की सतत और पुरजोर परोपकारी का नतीजा था कि स्त्री आन्दोलन के चौथे राष्ट्रीय अधिवेशन में जाति आधारित यौन-हिंसा और दलित सती के प्रश्नों पर विस्तार से चर्चा हुई।

ISSN 2454-308X
9 770024 543081

मुख्य शब्द : साहित्य, दलित, स्त्री, विमर्श, भारतीय इत्यादि।

प्रस्तावना

हमारे समाज में दलित-विमर्श से पहले स्त्री-विमर्श का आगमन हुआ। तमाम वजहों से स्त्री-अस्मिता अपने को उस तरह से संगठित आंदोलित और राजनीतिक अर्थों में आक्रामक नहीं बना पाई जिस तरह से बाद के दिनों में दलित-अस्मिता ने अपने को बनाया। दलित-अस्मिता विमर्श ने अपना जो शुरुआती घोषणापत्र पेश किया, उसमें तमाम छोटे-बड़े मुक्ति-संग्राम अंतर्भुक्त होते दिखे-यह उम्मीद भी बंधी कि ब्राह्मणवाद का जो पितृसत्तात्मक रूप है, और उसमें स्त्री दमन की जो तमाम तरकीबें हैं, उनका अंत होगा और नई समाज व्यवस्था शोषणरहित, समतामूलक और अधिक मानवीय होगी। दलित आडियोलॉग मानते हैं कि इतिहास ने उन्हें व्यवस्था के रूपांतरण का एक दुर्लभ अवसर प्रदान किया। वे विभिन्न प्रसंगों में अपनी इस ऐतिहासिक भूमिका की चर्चा करते हुए भी दिखाई पड़ते हैं, इस अस्मिता के एक प्रमुख हस्ताक्षर का कहना है "दलित मुक्ति के महान उद्देश्य हमारे सामने साफ हैं, और इतिहास निर्माण करने की जिम्मेदारियों ने हमारे कंधे मजबूत कर दिए हैं। साहित्य में नए युग का संपादन अब हम दलितों के हाथों से ही होना है।"

एलिस बाउल्डिंग के अनुसार ऐसी महान घोषणाओं को एक सवाल से अनिवार्यतः टकराना पड़ता है "इतिहास वही सवाल सभी क्रांतिकारियों से पूछता है-क्या आप प्रभुत्व के पुराने ढांचों और व्यवहारों को ध्वस्त करके उनकी जगह मानव संबंधों के नए रूपाकार लाएंगे। ब्राह्मणवाद का इतिहास देखते हुए इस प्रश्न की अहमियत और भी बढ़ जाती है ब्राह्मणवाद का मूलोच्छेद करने के लिए जिस सुनियोजित तैयारी की दरकार होती है, उसकी जगह अगर तुरत-फुरत कुछ कर डालने को हड़बड़ी दिखाई जाएगी तो विफलता ही हाथ लगेगी। वैकल्पिक व्यवस्था देने के लिए पूरी जीवन-पद्धति, भाषाई-संस्कार और नए विचार-स्रोतों का संधान करना होगा। इनमें से किसी एक को दरकिनार कर ब्राह्मणवाद का मुकाबला नहीं किया जा सकता। ब्राह्मणवादी रणनीति को अपनाकर यह सोचना कि उसके हथियार से उसे ही पराजित कर देंगे, मुगालते में रहना है। हां, इस प्रक्रिया में हो सकता है कि यह व्यवस्था प्रतिपक्ष को नेतृत्व देने वाले महत्वाकांक्षी लोगों का समायोजन कर ले और कुछ ऊपरी तब्दीलियों के साथ पूर्ववत बनी रहे।

दलित स्त्री आंदोलन; चिंतन और संघर्ष की चुनौतियां

भारतीय समाज की सबसे निचली सीढ़ी पर खड़ी दलित स्त्री ने समाज की वर्जनाओं निषेधाज्ञाओं को लांघते हुऐ ब्राह्मणवादी व्यवस्था के मुख्य आधार स्तम्भ; पितृसत्ता, धर्म और जातीयता को हमेशा कड़ी टक्कर दी है। चाहें वह चिन्तन का क्षेत्र हो अथवा संघर्ष का, दोनो स्तरों पर उसने अपने अस्तित्व व अस्मिता की लड़ाई को प्राचीन काल से लेकर आज तक जारी रखा है। आधुनिक महिला आन्दोलन की शुरूआत 18वीं शताब्दी से मानी जाती है परन्तु दलित महिला आन्दोलन की शुरूआत हम बौद्धकाल से ही मानते है। दलित महिला आन्दोलन महज 200 साल पुराना न होकर सदियों पुराना है, जिसमें सर्वप्रथम बौद्धकाल में दलित वर्ग की, थेरी सुमंगला और पूर्णिमा दासी के द्वारा लिखी गई कविताओं को, हम दलित नारीवाद की प्रथम सशक्त अभिव्यक्ति मानते है।

दलित स्त्रियां चौतरफा शोषण की शिकार हैं। दलित होने के कारण, स्त्री होने के कारण, और उस पर भी दलित स्त्री तथा चौथा गरीबी के कारण। चौतरफा शोषण, अन्याय, अत्याचार के बावजूद वह अनवरत काल से संघर्ष करती रहीं हैं। पूर्व मध्यकाल में कुछ दलित संत कवयित्रियां है जो अपनी अप्रतिम प्रतिभा व जीवटता के कारण ही तमाम जातीय षडयंत्रों की शिकार होकर भी गुमनामी के अंधेरे में ना खोते हुए, समय के पथ पर अपने महत्वपूर्ण पद चिन्ह छोड़ने में सफल रही हैं। हालांकि उनकी राह बहुत कठिन थी। परशुराम चतुर्वेदी अपनी पुस्तक (उतरी भारत की संत परंम्परा पेज 101 से 103) में चौदहवीं शती की

दलित संत ललदेह के बारे में अपना मत रखते हुए कहते है कि'लल्ला या लाल कश्मीर की रहने वाली एक ढेढवा मेहतर जाति की स्त्री थी जो सामाजिक दृष्टि से निम्न स्तर वाले परिवार की होकर भी बहुत उच्च विचार रखती थी। इसके विषय में प्रसिद्ध है कि यह शैव-सम्प्रदाय का अनुसरण करने वाली एक भ्रमणशील भंगिन थी''। चौदहवीं शताब्दी की संत ललदेह, जो कि कश्मीरी कविता की जनक भी कही जाती है, कुछ समय पहले तक मुख्य धारा के भक्ति काव्य-विमर्श और पटल से एकदम अदृष्य थी। दलित साहित्य और दलित महिला आंदोलन दोनों विदेशी विद्वान डा० गिर्यसन और डा. बनेट का हमेशा शुक्रगुजार रहेगा जिन्होने अपने अथक प्रयासों से गली-गली, गांव-गांव घूमकर, संत ललदेह का काव्य खोज निकाला और उनके वाखों को "लल्ला वाक्यानि" में संगृहीत कर दिया। संत ललदेह ने अपने वाखों के माध्यम से जाति प्रथा, धार्मिक कट्टरता, छुआछूत के खिलाफ बहुत ही सरल व सीधी भाषा में वाख यानि पद लिखे है। संत ललदेह ने मूर्ति पूजा के साथ-साथ स्वर्ग नरक की धारणा का भी खंडन किया है।

आज दलित स्त्रियां उच्चपद पर होने के बावजूद चाहे वह राजनैतिक हो शैक्षिक या फिर अन्य कोई, उन्हे जिस तरह से समाजिक हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है वह आंकड़ा दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। दलित छग्गीबाई सरपंच बनने के बाद भी अपमानित होती है, उड़ीसा में दलित बच्ची ममतानाईक को साईकिल से स्कूल जाने पर उससे साइकिल छीन कर बेइज्जत किया जाता है। डायन, चुड़ैल बताकर आज भी दलित आदिवासी महिलाओं को पत्थरों से मार दिया जाता है। बेड़िनी और बांछड़ा जाति की औरतों को जातिगत पेशे के नाम पर वेष्यावृति में धकेला जा रहा है। देवदासी के नाम पर दलित महिलाओं के शोषण का सिलसिला अनवरत जारी है। भारतीय महिला आन्दोलन के लिए दलित महिलाओं के मुद्दे जैसे मन्दिर, पानी की लड़ाई, सामाजिक यौन शोषण अस्पृष्यता कोई अहमियत नही रखते। मन्दिर पानी के मुद्दे उनके इसलिए अहमियत नहीं रखते क्योंकि उन्हें जन्म से ही जाति आधार पर ये सुविधाएं प्राप्त है। अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस जो कि प्रत्येक वर्ष आठ मार्च को मनाया जाता है इतने सालों में मंहगाई से भ्रूण हत्या तक मुद्दें बने पर दलित महिलाओ के मुद्दों को कभी प्राथमिकता नही मिली। क्या इसका कारण हम यह माने भारतीय महिला आन्दोलन अति उच्च शिक्षित मध्यम वर्ग की महिलाओं द्वारा चलाए जा रहें है। इसलिए उसमें उसी वर्ग की भागीदारी रही, और मुद्दे भी उन्ही के द्वारा प्रायोजित थे। पर ऐसा भी नही हैं, भागीदारी तो दलित पिछड़ी महिलाओं की बहुत अधिक रही पर लीडरशिप और मुद्दे उनके नही थे। किसी

भी आन्दोलन में चाहे वह जनवादी हो राष्ट्रीय आन्दोलन, दलित महिलाओं ने अपनी अहम भूमिका निभाई है। सहभागिता के नाम पर वे भीड़ के रूप में आन्दोलन में जुड़ी रही।

हिंदी साहित्य में 'स्त्री विमर्श'

पहली बात तो किसी भी भाषा का कोई भी बड़ा विमर्श दो-चार लेखकों के दम पर लम्बे समय तक नहीं चलता है और दूसरी बात कि वह किसी एक ही धारा में विकसित नहीं होता है। यदि किसी साहित्यिक विमर्श का मूल्यांकन दो-चार लेखकों को आधार बना कर किया जाये और निष्कर्ष भी दे दिया जाये तो यह साहित्य के साथ ही साथ उस विमर्श के भी बड़े परिप्रेक्ष्य की उपेक्षा है। हिंदी साहित्य में भी स्त्री विमर्श कई धाराओं में विकसित हुआ और उसका मूल कारण लेखिकाओं का अपना अनुभव जगत और अपनी अलग-अलग सामाजिक स्थिति है। जिस 'मर्दवाद' के खिलाफ स्त्री विमर्श खड़ा हुआ है उसकी प्रतिक्रिया में 'स्त्रीवाद' का वह रूप भी आता है जहाँ वह मर्दवादी अवधारणा पर ही खड़ा दिखाई देता है लेकिन ऐसी प्रतिक्रिया पश्चिम के स्त्री विमर्श का भी हिस्सा रही है। ऐसी प्रतिक्रियावादी धारा किसी भी विमर्श को दिग्भ्रमित कर सकती है खासतौर पर उसके सामाजिक उत्तरदायित्वों की दिशा को, इसलिए इस मुद्दे पर खुल कर बहस और आलोचना होनी चाहिए लेकिन इसे मूल्यांकन की कसौटी नहीं मान लेनी चाहिए।

उपसंहार

भारत में दलित महिला आंदोलन "अफ्रीकन ब्लैक वुमेन" का भारतीय संस्करण या प्रतिफल है। भारत में दलित महिला अपने सामाजिक रुढ़ीवादिता, धार्मिक अंधविश्वास के साथ उच्चवर्गीय सवर्णीय जाति में ऊपस्थित धार्मिक आचरणों का भी अनुसरण कर रही है। उदाहरण के तौर पर: केश-मुंडन, अवैज्ञानिक व्रत – उपवास, पूजा विधि –विधान आदि एवं सामाजिक आचरणों मे वस्त्र–त्याग आदि । स्वतंत्रता पूर्व और स्वतन्त्रता के बाद दलित महिलाऑं की समस्यायें और भी गंभीर होने का प्रमुख कारण है – महिला लेखिकाऑं द्वारा साहित्य में दलित महिलाऑं के विकास से संबन्धित समस्याऑं, मुद्दों को गंभीरता से न उठा पाना । "नारीवाद से जुड़ी सभी औरतों को ये सोचना होगा कि भारत में दलित स्त्री की बात किये बगैर नारीवाद का प्रश्न अधूरा है और यही पश्चिमी नारीवाद से भारतीय नारीवाद की भिन्नता का आधार है। नारीवादी अवधारणा में व्यापक बदलाव नारीवाद की तीसरी लहर के बाद आया। नारीवाद की तीसरी लहर मुख्यतः लैटिन अमेरिकी, एशियाई और अश्वेत नारियों से संबंधित थी, इस लहर पर उत्तर– आधुनिक विचारधारा का प्रभाव था, जिसके कारण ही भारतीय दलित महिलाएं सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक,

राजनीतिक आदि स्तर पर पिछड़ गयीं।" इस लहर ने भारतीय नारीवादी आंदोलन पर गहरा प्रभाव डाला। यहाँ भी दलित नारियों ने नारीवादी आंदोलन पर आरोप लगाना शुरू किया कि वह उच्चवर्गीय सवर्ण नारियों का प्रतिनिधित्व करता है और दलित, ग्रामीण और निर्धन महिलाओं को बाहर छोड़ देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[1] महात्मा फुले, समग्र रचनावली, महात्मा फुले, संपा. विमलकिर्ति राधाकृ-ण प्रकाशन, नई दिल्ली

[2] आधुनिकता के आइने में दलित, अभय कुमार दुबे (सं.), डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

[3] डॉ. आंबेडकस्व्यक्तित्व एवं कृतित्व, डॉ. डी.आर.जाटव, समता साहित्य सदन, जयपुर

[4] डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जीवन चरित, धनंजय कीर, (अनु. गजानन सुर्वे), पॉप्युलर प्रकाशन, नई दिल्ली

[5] हरिजन से दलित, राज किशोर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

[6] प्रेमचन्दर और उनका युग, डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 77

[7] दलित साहित्य का प्रेमचन्द, जीवन कला और कृतित्व, हंसराज रहबर, प्रकाशक, आत्माराम एंड संस, दिल्ली

[8] उद्भव और विकास प्रेमचन्द घर में, शिवरानी देवी, प्रकाशक, सरस्वती प्रेस, बनारस, उत्तर प्रदेश

[9] उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा, डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

[10] साहित्य का उद्देश्य, प्रेमचन्द, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद

[11] निराला रचनावली, संपादक, डॉ. नन्द किशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

[12] निराला की साहित्य साधना, डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

[13] नागार्जुन रचनावली, संपादक, शोभाकान्त, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली